खड़बड़ खड़बड़
गिजुभाई

खड़बड़ खड़बड़

गिजुभाई

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002

संस्करण : 2011 © सुरक्षित ISBN : 978-93-5000-624-5 मूल्य : 30.00

ISBN : 978-93-5000-624-5

वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
द्वारा प्रकाशित
प्रथम संस्करण : 2010. मूल्य : 30.00

आर. टेक. ऑफसेट, शाहदरा, दिल्ली
में मुद्रित

क्रम

जो कोई न कर सके

बादशाह ने कहा : “बीरबल, जिसे कोई न कर सके, ऐसा काम कौन कर सकता है?”

बीरबल ने कहा : “साहब, छोटे बच्चे।”

बादशाह बोला : “अच्छी डींग मार दी।”

बीरबल ने कहा : “देख लीजिएगा किसी दिन।”

बादशाह बोला : “ठीक है, देखेंगे।”

बादशाह तो कुछ समय के बाद यह बात भूल गया पर बीरबल नहीं भूला।

वह एक दिन गली में गया। जा कर बोला : “ओ बच्चो, इधर आओ।”

तुरन्त बच्चों की एक टोली आ कर खड़ी हो गई।

“अरे बच्चो, मेरा एक काम कर दोगे?”

“हाँ-हाँ बताइए, कर देंगे।”

“यह गढ़ देखते हो न? इसकी बगल में मिट्टी का एक बड़ा ढेर लगा दो, जाओ। जो एक तसली डालेगा उसे एक पाई मिलेगी, और जो दो डालेगा उसे दो पाइयाँ मिलेंगी।”

बच्चों की जात। एक आया, दूसरा आया, तीसरा आया, चौथा आया...ऐसे सारी गली के बच्चे इकट्ठे हो गये। फिर तो वे सब

तसली-तसली ला कर लग गये मिट्टी डालने को। फिर दूसरी गली के बच्चे भी आए, फिर तीसरी गली के आए और ऐसे सारे गाँव

के बच्चे आ गए।

बीरबल एक-एक पाई देता जाता और कहता जाता : "हम्बो मेरे बच्चो, हम्बो मेरे बच्चो, बढ़े चलो।"

बच्चे यानी कि चमत्कार, कुछ ही क्षणों में एक बड़ा ढेर हो गया। और फिर दो पल और बीतने को आए कि वह ढेर गढ़ के कँगूरे को छूने लगा।

बीरबल ने कहा : "अब तुम इसे रौंद कर बना दो जैसे रास्ता।"

बच्चे तो चाहते भी थे यही। वे सब लग गये रौंदने में। पल-भर में रास्ता बन गया। गली से ले कर गढ़ के ऊपर तक पहुँचने का रास्ता।

बीरबल ने कहा : "अब बस करो।"

फिर बीरबल ने हथसाल में से एक हाथी को मँगवाया और महावत से कहाः "इस रास्ते पर से हाथी को गढ़ पर चढ़ा दो।"

रास्ता तो अच्छा-भला था, इसलिए हाथी गढ़ पर चढ़ गया। गढ़ पर हाथी दूर से ही दिखने लगा। दूर-दूर से लोग उसे देखने लगे।

बीरबल ने कहा : "बच्चे लोग, अब इस मिट्टी के ढेर को तितर-बितर कर दो। पूरी मिट्टी को गली में बिखेर दो। जैसा पहले था, वैसा ही बना दो। एक-एक तसली के लिए एक-एक पाई।"

सब बच्चे दौड़ पड़े। पाई लेते जाते और तसली भर-भर मिट्टी फेंकते जाते। बच्चे लग जाएँ तो देरी किस बात की!

घड़ी-दो-घड़ी में जैसा था, वैसा ही हो गया। जैसे मिट्टी का ढेर था ही नहीं। किसी को मालूम ही नहीं होता था कि हाथी गढ़ पर चढ़ा कैसे!

बीरबल ने कहा : "बच्चे लोग। अब तुम सब अपने-अपने घर

चले जाओ। जब मैं बुलाऊँ तब सब आ जाना।"

सब बच्चे चले गए। फिर बीरबल ने बादशाह को बुलाया। गढ़ पर हाथी को देख कर बादशाह ने दाँतों तले अँगुली दबा ली।

बादशाह ने पूछा : "बीरबल! यह हाथी गढ़ पर कैसे चढ़ गया?"

बीरबल ने कहा : "सा'ब, छोटे बच्चों ने चढ़ाया है।"

बादशाह ने पूछा : "यह कैसे?"

तब बीरबल ने पूरी बात बता दी। बादशाह खुश हो गया। फिर खाया, पिया और राज किया।

"परन्तु हाथी नीचे उतरा या नहीं?

"उतरा था न!"

"कैसे?"

एक बार फिर बीरबल ने सब बच्चों को बुलाया और मिट्टी का ढेर लगवाया और हाथी को नीचे उतारा।

•••••

खड़बड़-खड़बड़ खोदत है

एक था ब्राह्मण। वह बहुत ही गरीब था। एक बार उसकी पत्नी ने कहा: "अब तुम कुछ काम-धन्धा करो तो अच्छा है। कभी-कभी तो बाल-बच्चे भूखे-प्यासे ही रह जाते हैं।"

ब्राह्मण ने कहा : "परन्तु मैं क्या करूँ? मुझे तो कोई काम-काज आता ही नहीं। क्यों न तुम मुझे कुछ सिखा दो?"

ब्राह्मणी पढ़ी हुई और बुद्धिमान थी। उसने कहा : "मैं तुम्हें एक श्लोक सिखाती हूँ। कण्ठस्थ कर लो। फिर जा कर किसी राजा को यह श्लोक सुनाना। श्लोक सुन कर राजा तुम्हें कुछ-न-कुछ धन जरूर देगा, पर इसे भूल मत जाना।"

फिर ब्राह्मणी ने ब्राह्मण को एक श्लोक कण्ठस्थ करा दिया। ब्राह्मण उसे रटता हुआ परदेश को चला। रास्ते में एक नदी आई। वहाँ ब्राह्मण स्नानादि करने और भात खाने के लिए रुक गया। स्नानादि की क्रिया में श्लोक भूल गया। बहुत याद किया परन्तु उसे श्लोक का एक शब्द भी याद नहीं आया।

उसी समय उसने एक बत्तख को नदी किनारे पर मिट्टी खोदते हुए देखा। श्लोक का स्मरण करते हुए उसने बत्तख को देखा था, अतः उसके मन में एक नई पंक्ति का स्फुरण हुआ। बोला :

खड़बड़-खड़बड़ खोदत है

ब्राह्मण ऊँची आवाज में यह पंक्ति बोल रहा था, इसलिए उसकी आवाज सुन कर बत्तख अपनी गरदन ऊँची उठा कर देखने लगी। यह देख ब्राह्मण के दिमाग में दूसरी पंक्ति स्फुरित हुई। बोला :

लम्बी गरदन से देखत है

ब्राह्मण की दूसरी बार की यह आवाज सुन बत्तख डर गयी और चुपचाप दुबक कर बैठ गयी। यह दृश्य देख ब्राह्मण के दिमाग में तीसरी पंक्ति कौंधी। वह बोलाः

उकड़ूँ-मुकड़ूँ बैठत है

ब्राह्मण की यह आवाज़ सुन बत्तख जल्दी-जल्दी चलती हुई पानी में चली गयी। यह देख कर ब्राह्मण के दिमाग में चौथी पंक्ति आई। वह बोला :

धड़बड़-धड़बड़ दौड़त है

अब ब्राह्मण अपना पहला श्लोक तो भूल गया था, परन्तु उसे दूसरा श्लोक मिल गया। वह यही श्लोक रटते-रटते आगे बढ़ने लगा, मानो उसकी पत्नी ने उसे यही श्लोक सिखया था :

खड़बड़-खड़बड़ खोदत है,
लम्बी गरदन से देखत है,
उकड़ूँ-मुकड़ूँ बैठत है,
धड़बड़-धड़बड़ दौड़त है।

चलते-चलते एक शहर आया। वह उस शहर के राजा के दरबार में गया और सभा के बीच जा कर बोला :

खड़बड़-खड़बड़ खोदत है,
लम्बी गरदन से देखत है,

उकड़ूँ-मुकड़ूँ बैठत है,
धड़बड़-धड़बड़ दौड़त है।

राजा ने यह अजीबोगरीब श्लोक लिख लिया। दरबार में कोई इस श्लोक का अर्थ नहीं बता सका। तब राजा ने ब्राह्मण से कहा : "महाराज! दो-चार दिनों के बाद आप फिर से दरबार में आइए। फिलहाल राजकीय भोजन खा कर आनन्द से रहिए। आपके श्लोक का उत्तर हम बाद में देंगे।"

राजा ने ब्राह्मण का श्लोक अपने सोने के कमरे में लिखवा दिया। फिर क्या हुआ कि राजा हर रोज रात के बारह बजे उठता और एकान्त में आराम से श्लोक पढ़ता और उसका अर्थ सोचता।

एक रात को चार चोर राजा के महल में चोरी करने का इरादा कर घर से निकले। वे राजा के महल के पास जा कर खोदने लगे। ठीक रात के बारह बजे थे और उसी समय राजा श्लोक की पहली पंक्ति का अर्थ सोच रहा था। चोर दीवार खोद रहे थे। तभी राजा के बोल उनके कानों में पड़े:

खड़बड़-खड़बड़ खोदत है

चोरों ने मन में सोचा कि राजा जाग रहा है और खुदाई की आवाज सुन रहा है, इसलिए चोरों में से एक चोर महल की खिड़की पर चढ़ा और अपनी गरदन लम्बी करके कमरे में देखने लगा कि राजा जाग रहा है कि नहीं। उसी समय राजा ने दूसरी पंक्ति का उच्चारण किया :

लम्बी गरदन से देखत है

यह सुनते ही खिड़की वाला चोर समझ गया कि राजा जाग रहा है और मुझे झाँकते हुए भी उसने देख लिया है। वह शीघ्र ही नीचे उतर गया और दूसरों को भी चुपचाप दुबक कर बैठ जाने का इशारा किया। सब चुपचाप दुबक कर बैठ गए। उसी समय राजा

ने तीसरी पंक्ति का उच्चारण किया :

उकड़ूँ-मुकड़ूँ बैठत है

चोरों ने सोचा कि अब तो भाग चलना चाहिए। राजा को यह सब मालूम हो गया है और हम सबको देख भी लिया है। अब हम अवश्य पकड़े जाएँगे और मारे भी जाएँगे। वे सब डर के मारे एक साथ दौड़ पड़े। उसी समय राजा ने चौथी पंक्ति का उच्चारण किया :

धड़बड़-धड़बड़ दौड़त है

ये चोर और कोई नहीं, राजा के दरबान थे। वे ही राजा के चौकीदार थे। उनकी नीयत बिगड़ गई थी इसलिए उन्होंने चोरी का इरादा किया था। चोर भाग कर अपने-अपने घर पहुँच गए परन्तु अगले दिन दरबार लगा तो वे राजा की सलामी करने के लिए न गए। वे समझ रहे थे कि अवश्य राजा जी सब कुछ जान गये हैं और हमें पहचान लिया गया है।

राजा ने देखा कि सलामी के लिए दरबान नहीं आये हैं, तब पूछा : "आज दरबान लोग सलामी के लिए क्यों नहीं आए हैं? उनके घरों में सब कुशल तो है न?"

राजा ने दूसरे सिपाहियों को भेज कर दरबानों को बुलवाया। दरबार में दरबान आए और सलामी भर कर खड़े हो गए।

राजा ने पूछा : "बोले, आज तुम लोग कचहरी में क्यों नहीं आए थे?"

सब दरबान काँपने लगे। राजा को सब मालूम हो गया है, यही वे समझ रहे थे। फिर अब और झूठ बोलेंगे तो मर जायेंगे, ऐसा मान कर उन्होंने रात में जो घटना घटी थी, सब बता दी।

यह सब सुन कर राजा को विस्मय हुआ। फिर उसने सोचा कि यह तो ब्राह्मण के श्लोक का ही प्रताप है। श्लोक तो भारी चमत्कारी है! ब्राह्मण के पद पर राजा खुश होकर झूम उठा। उसने ब्राह्मण को बुलाया और बड़ा इनाम दे कर विदा किया।

ब्राह्मण को बड़ा भारी सिरोपाव मिला था, इसलिए श्लोक का अर्थ कराने की अब कोई जरूरत रही न थी। वह और कुछ सोचे-समझे बिना अपने घर पहुँच गया। फिर खाया, पिया और मौज की।

•••••

सा'ब, बच्चों को सँभाल रहा था

बादशाह और बीरबल बैठे हुए थे।

बादशाह ने कहा : "बीरबल, आज तुम कचहरी में देरी से क्यों आए?"

बीरबल ने कहा : "साहब, क्या करूँ? बच्चों की देखभाल कर रहा था।"

बादशाह ने कहा : "परन्तु इसमें इतनी देरी होने का क्या कारण है?"

बीरबल ने कहा : "साहब, बच्चों की देखभाल करना बहुत मुश्किल काम है।"

बादशाह ने कहा : "अरे! बच्चों की देखभाल करने में कौन बड़ी बात है? उन्हें पाई-पैसा दे दो, सेव-मुरमुरा खिला दो, उनका रोना-धोना बन्द!"

बीरबल ने कहा : "साहब! अनुभव कर लीजिएगा, फिर मालूम हो जाएगा।"

बादशाह ने कहा : "ऐसी बेपैंदी की बात में अनुभव करने का क्या है?"

बीरबल ने कहा : "तो लीजिए, मैं आपका बेटा बनता हूँ, आप मेरी देखभाल कीजिएगा।"

बादशाह ने कहा : "ठीक है। चलो, मैं बाप बनता हूँ और तुम मेरे बेटे बन जाओ।"

बीरबल ने शुरू किया : "अें-अें-अें! पिताजी, मुझे दूध पीना है।"

बादशाह ने कहा : "सुनो, दूध लाओ।"

दूध आया। बीरबल ने पिया।

"अें-अें-अें!... पिताजी, मुझे कंधों पर बैठना है।"

"अरे! क्या बादशाह के कंधों पर बैठा जाता है?

"क्यों नहीं? बादशाह का बेटा जो हूँ!"

बादशाह ने बीरबल को कंधों पर बिठाया और फिर नीचे उतारा।

"अें-अें-अें! पिताजी, मुझे गन्ना खाना है!"

बादशाह ने गन्ना मँगवाया।

"अें-अें-अें! पिताजी, इसके टुकड़े कर दीजिए।"

बादशाह ने टुकड़े कर दिए।

"अें-अें-अें! नहीं पिताजी, टुकड़ों को पूरा गन्ना बना दीजिए।"

"अरे सुन! टुकड़ों से पूरा गन्ना कैसे बन सकता है?"

बीरबल रोने लगा : "अें-अें-अें...! टुकड़े नहीं चाहिए, मुझे पूरा गन्ना चाहिए।...अें-अें-अें...!"

"चल-चल! चुपचाप गन्ना खा"

"नहीं पिताजी! हमारा गन्ना लाओ!"

"अरे कोई सुनो, एक और गन्ना लाओ!"

"नहीं-नहीं! इन्हीं टुकड़ों का पूरा गन्ना बना दो, पिताजी! दूसरा नहीं चाहिए!"

बादशाह ने कहा : "नादानी मत करो!"

बीरबल ने कहा : "नहीं-नहीं-नहीं! हमारे इन्हीं टुकड़ों का गन्ना बना कर दो! अें-अें-अें!"

बादशाह ने कहा : "यह माथा-पच्ची कौन करेगा? अरे है कोई? इस लड़के को बाहर ले जाओ।"

बीरबल हँसने लगा।

बादशाह ने कहा : "बीरबल तुम सच कहते हो, बच्चों को सँभालना मुश्किल तो है!"

♦♦♦♦♦

एक खुदा

"क्यों मियाँ सा'ब! कहाँ चले?"

"मोखकड़ा जा रहा हूँ महाराज! आपको कहाँ जाना है?"

"मैं रामपुर जा रहा हूँ।"

"ओहो! तब तो यूँ कहिए कि हमारा रास्ता एक ही है!"

बातें करते-करते दोनों चले। रास्ते में हनुमान जी का मन्दिर आया।

महाराज ने कहा : "मियाँ सा'ब! मैं हनुमान जी के दर्शन कर लूँ।"

दर्शन करने के बाद महाराज और मियाँ आगे चले।

कुछ आगे चलने के बाद सती के पदचिह्न आए। महाराज ने पदचिह्न के दर्शन किए।

कुछ आगे चले तो फिर शंकर का मन्दिर आया।

महाराज ने कहा : "मियाँ सा'ब! आप बाहर खड़े रहिए। मैं शंकर बापा के दर्शन करके आ रहा हूँ। एक लुटिया पानी भी चढ़ा दूँ।"

मियाँ ने कहा : "पण्डितजी! आपके देव कितने हैं! तीन तो रास्ते में ही मिल गए!"

"अरे मियाँ सा'ब! हमारे तो तैंतीस कोटि देव हैं—और जितने

देव, उतनी ही देवियाँ! मियाँ सा'ब, आपके कितने देव हैं?"

"हमारे?—हमारे तो एक ही देव हैं! एक खुदा! अल्लाह हो अकबर! बस वह एक ही है, सबसे बड़ा।"

"तो मियाँ सा'ब! आपके मुसलमानी धरम में कुछ नहीं है! पूरा एक ही देव? एक खुदा? गणपति नहीं, हनुमान नहीं, माता जी नहीं, राम नहीं, कृष्ण नहीं, इन्द्र नहीं, वरुण नहीं—कुछ नहीं है आपके धरम में!"

"बस हमारे तो एक देव और एक ही यकीन! दूसरे देव-देवी कुछ नहीं। "

पण्डित जी ने कहा : "हमारा हिन्दू धर्म तो देखिए कितना बड़ा है!"

"छोटा-बड़ा तो हम नहीं जानते, मगर हमारे तो एक ही देव है। उसी एक ने सबको पैदा किया। वो ही खिलाने वाला, वो ही पिलाने वाला। वो ही सब कुछ है, दूसरा कोई नहीं। एक का नाम और एक का ही काम।"

चलते-चलते नदी आ गई। पण्डित जी और मियाँ जी नदी पार करने लगे। वर्षा के दिन थे। अचानक बाढ़ आई और दोनों बहने लगे। बहुत कोशिश करते थे परन्तु बाहर नहीं निकल पा रहे थे।

महाराज दूर-दूर बहते जा रहे थे और मुख से बोलते जा रहे थे : "हे भगवान! हे भगवान!"

भगवान ने सोचा : "मेरा भक्त मुझे बुला रहा है, चलना ही होगा!"

तब महाराज ने कहा : "हे शंकर बापा! हे शंकर बापा!"

लक्ष्मी जी ने कहा : "भगवान, तुम मत जाना; वह तो शंकर बापा को बुला रहा है, सो शंकर जाएँगे।"

शंकर ने पार्वती जी से कहा : "मेरा भक्त मुझे पुकार रहा है। मुझे जाना ही होगा।"

फिर हाथ में मृगचर्म लेकर खड़े हो गए।

तब पण्डितजी बोलने लगे : "हे गणपति दादा! हे गणपति दादा!"

पार्वती जी ने कहा : "गणपति जाएँगे; रहने दो अब! गणपति का भी भक्त है न?"

गणपति बड़ी तोंद ले कर, सूँड़ हिलाते-हिलाते खड़े हुए। इतने में पण्डितजी घबरा गये और बोलने लगे : "हे माता जी! हे

कालिका ! हे भवानी! हे बाघेश्वरी! हे महिषासुर मर्दिनी! हे त्रिपुर सुन्दरी! मेरी मदद के लिए आओ।"

गणपति बोले : "जाएँगी माताजी, मैं कहाँ जाऊँगा यह भारी-भरकम काया ले कर?"

सब देवियाँ खड़ी हो गईं, "चलिए-चलिए! हमारा भक्त दुखी हो रहा है...पर कौन जाये? यह तो कभी इसको बुलाता है, कभी उसको बुलाता है।"

"हे देवी! हे इन्द्र! हे देवाधिदेव! हे वरुण! हे राम! हे भैरव! हे मुनि! हे सप्तर्षियो! हे नाग! मेरी मदद के लिए दौड़ पड़ना!"

सब देव जाग गए, सब उठ खड़े हुए और जाने के लिए तत्पर भी हुए, परन्तु जाता कौन? एक कहता कि वह जाएगा और दूसरा कहता वह जाएगा; मुझ अकेले को कहाँ बुलाता है? दो देव जा कर क्या करेंगे? एक डूब रहे ब्राह्मण को निकालना है, इसमें सबका का क्या काम है?

"हे नर्मदे! हे सिन्धु! हे कावेरी! हे गंगा! हे यमुना! हे नगाधिराज हिमालय! हे चन्द्र! हे सूर्य!"

सूर्य ने रथ तैयार करवाया। चन्द्र तैयार हो गया। हिमालय ने पंख फड़फड़ाए! गंग-जमुना के जल चलने लगे। अब ब्राह्मण को बचा लेते हैं।

"हे सुरधन! हे कुलदेवी! हे माता मेलड़ी! तुम मेरी मदद के लिए आ जाना!"

ब्राह्मण डूबता जा रहा है और देवों के नाम बोलता जा रहा है, परन्तु कौन आता? इतने जनों का भक्त! इतने सब उसके देव! एक कहता है कि दूसरा निकालेगा, तो दूसरा कहता है कि तीसरा निकालेगा।

हाथ-पाँव थक गए, पछाड़ें भी कम हो गईं। ब्राह्मण डुबकियाँ खाने लगा।

और आखिर में "हे गुरुदत्त! हे चण्डिका! हे ग्रामदेवी!" करते-करते डूब गया।

उधर मियाँ जी के एक ही देव थे, केवल एक खुदा। "खुदा, या खुदा! खुदा, या खुदा! या खुदा!" डूबता जाता और बोलता जाता था—"या खुदा, या खुदा!"

खुदा ने सुन लिया, बोले "मुझे बुलाता है? चलो!" खुदा तो दौड़ते हुए नदी के किनारे पर आए।

"खुदा, या खुदा! खुदा, तू एक है। या खुदा!"

खुदा ने हाथ लम्बा कर डूबते हुए मियाँ को बाहर निकाल लिया।

•••••

सचमुच का लोभी

सचमुच का लोभी। पक्का लोभी। लोभी का भी लोभी।

भाई को खोपड़ा खाने का मन हुआ। सोचा : "चलो, बाजार में चलते हैं और दाम पूछते हैं।"

"अरे, नारियल वाले भाई! इस नारियल के क्या दाम लोगे?"

"काका, दो रुपये।"

"दो रुपये? छोड़ो, इसे हम नहीं ले सकते। क्या रुपये में नारियल कहीं मिलेगा?"

"काका, थोड़ा आगे जाइए, गाँव के बाहर गोदाम में से मिल जाएगा।"

"तो फिर गोदाम तक चलते हैं! एक रुपये की बचत होगी और घूमना-फिरना भी हो जाएगा।"

गोदाम में पहुँचे और बोले : "अरे, नारियल वाले भाई! नारियल के क्या दाम लोगे?"

"काका, एक रुपया लगेगा। ये रहे नारियल, जितने जरूरत हों, ले लीजिए!"

"अरे भाई! यहाँ तक चल कर आया और पूरा एक रुपया? पचास पैसे में दे दो, पचास पैसे में।"

"काका, थोड़ा आगे जाइए, बन्दरगाह पर पचास पैसे में मिल जाएगा।"

पचास पैसे मुफ्त में थोड़े मिलते हैं? और इतना चलने से पाँवों को क्या होने वाला है? चलिए, बन्दरगाह तक ही चलते हैं!

भाई बन्दरगाह पहुँचते हैं : "अरे, जहाज़ वाले भाई! नारियल के क्या दाम हैं? ये तो बढ़िया नारियल दिखते हैं!"

"काका! हम मोल-भाव नहीं करते, बस पचास पैसे में एक नारियल, ले लीजिए!"

"अरे राम! इतना चल कर आया, सब फोकट में गया? क्या चवन्नी में नहीं दोगे? ले लो यह चवन्नी नगद।"

"काका! चवन्नी में नारियल यहाँ नहीं मिलेगा। सामने वन दिखता है न, वहाँ चले जाइए। वहीं से आपको मनपसन्द नारियल मिल जाएँगे। चवन्नी में एक!"

चलिये, इतना और चल लेते हैं और वन में ही जाते हैं। चवन्नी बच जाएगी तो एक जून का दूध आएगा। चवन्नी मुफ़्त में थोड़ी मिलती है!

वे वन में पहुँचते हैं : "अरे भाई! अहा! नारियल का क्या ढेर लगाया है! क्या दाम हैं नारियल के?"

"अरे काका! यहाँ मोल-तोल नहीं होते, एक चवन्नी का एक! ले लीजिए, जितने चाहिए, आपको! यह बड़े-बड़े रावण मत्थे रहे।"

"हाय प्रभु! इतनी दूर आए और चवन्नी देनी पड़ेगी! यह तो ऊपर से सिर-मुँडाई जाएगी। यहाँ वन तक आया, पाँव छिदे, जूते घिसे—और एक नारियल की चवन्नी! यह तो बड़ा जुर्म है भाई। चवन्नी की बात छोड़ो भले मानुष! एक नारियल तो मुफ्त ही में दे दो! मैं ब्राह्मण हूँ!"

"काका! यह बात मत कीजिए। आप मुफ्त में लेना चाहते हैं, तो वह रहा नारियल का पेड़। ऊपर चढ़ जाइए और जितने चाहिए, ले लीजिए! यह चवन्नी तो ऊपर चढ़ने का दाम है। नारियलों की यहाँ कौन सी कमी है?"

हैं? ऊपर चढ़ूँ तो क्या मुफ्त में नारियल मिलेंगे? चढ़ता हूँ तब तो। जो होगा, देखा जाएगा।

लोभी भाई नारियल के पेड़ पर चढ़े : इतने सारे नारियल अभी उतारता हूँ, और इतने सारे ले जाता हूँ! एक पैसा भी चुकाना नहीं होगा! ऐसा मौका फिर कहाँ मिलने वाला है?

लोभी भाई ऊपर पहुँच गए। फिर जैसे ही हाथ लम्बा कर

नारियल पकड़ने को जाते हैं, वैसे ही पैर छिटक गए और लोभी भाई लटक गए। अब इधर आते हैं, उधर जाते हैं, हवा में झूलने लगे! अब क्या करें?

"अरे भाई! मुझे नीचे उतार दे!" उन्होंने कहा।

"बाबू! यह मेरा काम नहीं है। तुम जितने जी चाहे, नारियल ले लो—मैं कहाँ एक पैसा भी माँग रहा हूँ?"

"अरे ऊँट वाले भाई! जरा इधर आ कर मेरे पैरों को तने से लगाओ न! आपका बड़ा उपकार होग़ा, भला!"

"ओह बेचारा इन्सान। इसके पैर तने से लगा दूँ, तो मेरा क्या बिगड़ता है?"

वह ऊँट पर खड़ा हो गया। लोभी के पैर पकड़े और धीरे-से तने पर लगाने लगा, परन्तु ऊँट सो ऊँट! उसे इतना भी मालूम नहीं कि मैं थोड़ा-सा हटूँगा तो वह लटक जाएगा!

हरी-हरी शाखाएँ और हरे-हरे पत्ते। फिर ऊँट भाई कैसे अपने मन पर काबू रखते? अपनी लम्बी गरदन और लम्बी करके थोड़ा दूर हटे और देख लो मजा! एक ही जगह पर दो लटके।

उधर से एक घुड़सवार आ रहा था।

"अरे भाई घोड़े वाले! बाबू, हम पर दया करो! मेरे इन पैरों को तने से लगा दो न!"

वहाँ कहाँ देर होने वाली है? इस घोड़े पर खड़ा रहूँगा और अब इनके पैर तने पर रख दूँगा।

परन्तु घोड़ा भी ऊँट से कम नहीं था। हरी घास किसे नहीं भाती? जैसे ही उसने अपनी गरदन नीची की कि सवार के पैर फिसल गए। सवार बेचारा क्या करता? ऊँट सवार के पैर पकड़ रखे। देख लीजिये तमाशा...! एक के बदले तीन लटक रहे हैं!

घुड़सवार बोला : "ऐ भाई, पहले भाई! नारियल को मजबूती से पकड़े रहना। अभी कोई सवार आएगा। बराबर पकड़े रखना भाई! मैं तुझे सौ रुपये दूँगा।"

ऊँट वाले ने कहा : "ऐ भाई, पहले भाई! नारियल को मत छोड़ देना! अच्छी तरह पकड़े रहना। मैं तुझे दो सौ रुपये दूँगा!"

"दो सौ और एक सौ—तीन सौ रुपये! अहाहा! इतने सारे?" लोभी बोला और उसके हाथ खुल कर रुपयों का ढेर बनाने लगे। नारियल हाथों में से छूट गया और तीनों जमीन पर जा रहे।

लोभी भाई का क्या हुआ? उनके सौ साल क्या पूरे हो गए?

◆◆◆◆◆

चोर पकड़ा

दिल्ली शहर में एक सेठ के घर में बहुत बड़ी चोरी हो गई।

बहुत खोजबीन की गई पर चोर का कहीं पता न चला।

"इतने बड़ी चोरी और चोर का पता न लगे?" सारे राज्य में चर्चा होने लगी।

अकबर ने भी चर्चा सुनी। उसे बहुत बुरा लगा। "इतना बड़ा मैं शाह, इतना बड़ा मेरा राज, इतनी बड़ी मेरी पुलिस फौज, और चोर पकड़ा न जाए?"

दरबार लगा। बादशाह ने बीरबल से पूछा, "बीरबल! यह चोरी अब तक क्यों नहीं पकड़ी गई है?"

"हुजूर! पुलिस से पूछिए।"

बादशाह ने पुलिस के सरदार को आदेश दिया : "आठ दिनों में चोर को पकड़ कर हाजिर करो, वरना तुम्हें घानी में डाल कर तेल निकाला जायेगा।"

दरबार बर्खास्त हो गया। अमीर-उमराव सब अपने-अपने घर चले गए।

परन्तु पुलिस अमलदार घबड़ा रहा था। चोर को कहाँ से पकड़ेंगे? आठ दिनों के बाद मौत तो सामने खड़ी है!

बहुत दौड़-धूप की, परन्तु चोर का कहीं से पता न मिला।

अन्तिम दिन आ गया। पुलिस अमलदार बहुत घबड़ाया : "सौ वर्ष पूरे हो गए, कल तो हमारी मौत आ जायेगी!"

अमलदार सोच में डूबा हुआ चारपाई पर पड़ा था। उसकी पुत्री

ने पूछा : "बापू! बीरबल से पूछ कर देखिए। बीरबल चतुर है। वह कोई उपाय जरूर ढूँढ निकालेगा।"

पुलिस अमलदार बीरबल के पास गया।

बीरबल ने उसकी बात सुनी, फिर कहा : "ठीक है, कल सुबह आ जाना। ख़ुदा की मेहरबानी होगी तो चोर जरूर पकड़ा जाएगा।"

अमलदार चिन्तामग्न अपने घर चला गया।

बीरबल सेठ के घर गया। घर का सब हाल देख लिया। सब तजवीज की गई। फिर सेठ से कहा : "आप शाम को अपने चारों नौकरों को मेरे घर भेज देना।"

शाम को सेठ के चारों नौकर बीरबल के घर पर हाजिर हो गए।

बीरबल ने सबको सामने बिठा कर उनकी शक्लें देख लीं। चार लकड़ियाँ मँगवा कर हर एक को एक-एक दी, और कहा : "तुम सब आज की रात यहीं सोओगे। चारों के लिए चार कमरे अलग-अलग हैं। तुमको जो एक-एक लकड़ी दी गई है, वह अपने सिरहाने रख कर तुम्हें सो जाना है। इस लकड़ी की खूबी यह है कि जिसको भी चोरी की बात की जानकारी होगी, उसकी लकड़ी चार अँगुल बढ़ जायेगी और जो चोरी की बात नहीं जानता होगा, उसकी लकड़ी वैसी की वैसी रहेगी।"

चारों नौकर अपने-अपने कमरे में गए और लकड़ी सिरहाने रख कर सो गए।

तीन नौकर तो सोते ही गहरी नींद में गड़प हो गए। वे चोरी के बारे में कुछ जानते ही नहीं थे। उनके मन में कोई भय नहीं था। परन्तु एक नौकर को किसी भी तरह नींद नहीं आ रही थी। बार-बार लकड़ी हाथ में पकड़ता और सोचता था : क्या करूँ?

सवेरा होगा और लकड़ी चार अँगुल बढ़ जाएगी! फिर पकड़ा जाऊँगा, अब क्या किया जाए?

एकाएक उसे एक विचार आया। चारों ओर नजर दौड़ाई। बीरबल ने चारों कमरों में एक-एक धारदार चाकू रखवाया था। नौकर ने चाकू लिया। लकड़ी पर चार अँगुल का नाप ले कर उतनी लकड़ी काट डाली। फिर लकड़ी का सिरा घिस कर पहले जैसा गोलाकार और मैला बना लिया। इसके बाद मन-ही-मन बोला : "बस, अब कोई फिकर नहीं। अब लकड़ी चार अँगुल बढ़ जाएगी तो भी कोई चिन्ता नहीं है। जितनी बढ़ने वाली थी, उतनी तो काट डाली है। फिर बढ़ेगी तो भी सुबह में एक समान ही रह जाएगी।"

तदन्तर वह सो गया और आराम से सुबह तक सोता रहा।

सब नौकरों के उठने से पहले ही बीरबल ने कमरों के दरवाजे खुलवाए और नौकरों को अपनी-अपनी लकड़ी ले कर हाजिर होने का आदेश दिया।

चारों अपनी-अपनी लकड़ी ले कर हाजिर हुए।

तीनों को कोई चिन्ता नहीं थी। चौथे को भी था कि लकड़ी बढ़ कर भी पहले जितनी ही रहेगी!

तीन नौकरों की लकड़ियाँ नाप कर देख ली गईं, और तीनों को छुट्टी दे दी गई। चौथे की लकड़ी ली और नापी--पर वह तो चार अँगुल छोटी हो गई थी!

बीरबल वह नापता था और चौथा नौकर देख रहा था। देख कर वह तो सन्न रह गया!

बोला : "साहब! मैं कुछ नहीं जानता हूँ कि लकड़ी कैसे छोटी हो गई। साहब, मैं तो उसे सिरहाने रख कर सो गया था!"

परन्तु फिर क्या था, पुलिस अमलदार और उसका चाबुक

हाजिर थे।

पल-भर में नौकर ने सब कुछ कबूल कर लिया और चोरी का माल हाजिर कर दिया।

पुलिस अमलदार ने बीरबल का शुक्रिया अदा किया। सेठ को अपना माल वापिस मिला और बादशाह को भी आनन्द हुआ।

•••••

पीरू

पीरू जवान था। बाहुबली था, पैर मजबूत थे। चेहरा गुलाबी था।

वह सिर पर गर्दन के भाग में लम्बे बाल रखता। कसा हुआ अँगरखा पहनता और हाथ में लाठी रखता।

पिताजी बूढ़े थे, सत्तर साल के। गंजा सिर, आँखों में मोतियाबिन्द। पैरों ने भी जवाब दे दिया था।

पिताजी को पीरू प्यारा था और पीरू को रमजू। पीरू पिताजी का था और रमजू पीरू का। पिता के लिए तो छह महीने का रमजू भी बच्चा था और अठारह वर्ष का पीरू भी बच्चा था।

पिताजी बरामदे में बैठते, सुँघनी सूँघते, बन्दगी करते, दो जून रोटी खाते और रमजू को प्यार से खिलाते। पीरू घानी चलाता, तेल बेचता, ग्राहक निबटाता, पैसे गिनता और व्यापार करता।

पिताजी बरामदे में से पीरू को घूमता-घामता देख कर खुश होते। पीरू बार-बार घर के भीतर जा कर रमजू को देखता।

पिताजी को पीरू की मुख्य चिन्ता, और पीरू को रमजू की मुख्य चिन्ता। परन्तु पीरू के लिए तो पिताजी की चिन्ता किसी बिसात में ही नहीं थी! और रमजू पीरू की चिन्ता समझ सके, इतना बड़ा कहाँ था?

पिताजी कहते : "पीरू! आधी रात को बाहर जा रहा है तो लाठी ले कर जाना और जूते पहन कर जाना।"

पीरू जवाब देता : "पिताजी! इतनी ज्यादा फिकर क्यों करते हैं? मुझे क्या ये सब मालूम नहीं है?" फिर पीरू जान-बूझ कर जूते पहने बिना ही चला जाता। वह जवान था न!

पिताजी का दिल दुख से भर जाता, परन्तु पीरू के लिए तो इसका कोई मतलब नहीं था।

कड़ाके की ठण्ड हो और पीरू नंगे शरीर बैलों को घास-चारा डाल रहा हो तो पिताजी कहते : "पीरू! पिछौरी ओढ़, पिछौरी; कहीं ठण्ड की चपेट में न आ जाए"

पीरू कहता : "पिताजी! यह ठण्ड तो आप जैसे बूढ़ों को लगती है,मुझे तो उलटे उमस होती है उमस!"

लड़का बड़ा और जवान था। उलटा-सीधा बोल जाता, तो भी पिताजी कहते : "नादान बच्चा है।"

बाप सो बाप!

गर्मी की दोपहरी तप रही थी। सूरज सिर पर था। घर में रोटियाँ बन रही थीं। पीरू छप्पर पर फेरवट कर रहा था। पिता ने पुकारा : "ऐ पीरू! अब नीचे आ जा। कब का ऊपर है? मध्याह्न हो गया।"

पीरू बोला : "बापूजी, अब एक पाँत ढँक कर आ जाता हूँ। अभी आया।"

पीरू खपरैलों की फेरौरी कर रहा था, फिर भी पिता को जल्दी थी। उन्हें लग रहा था कि मेरा पीरू धूप में तप रहा है, कहीं वह बीमार न हो जाए! पिता ने फिर पुकारा : "पीरू! कब आएगा नीचे? सिर पर सख्त धूप है, क्या देखता नहीं है? आ जा, खाना खाने की बेला भी हो गई है।"

पीरू धूप में तप उठा : "अब आधी पाँत ढँक कर उतरता हूँ।

इतनी जल्दी क्या है बापू? आपको भूख लगी हो तो खा लीजिए! मुझे तो थोड़ी देर लगेगी।"

पिता सोच में पड़ गए। थोड़ा बुरा भी लगा। वे न रह सके। जरा जोर से पुकारा : "ओ पीरू! मानता क्यों नहीं है? सिर पर आग बरस रही है और पाँति ढँक रहा है? मुझे भूख की चिन्ता नहीं है; मुझे तो तेरी फिकर सता रही है।"

पीरू बड़बड़ाने लगा : "अरे! पिताजी को तो देखो, उन्हें मेरी चिन्ता सता रही है! क्या मैं रमजू हूँ? अरे बापा! आप आराम से बैठिए। मैं कोई छोटा बच्चा नहीं हूँ—मुझे क्या धूप लगेगी? ढँक कर अब घड़ी आया।"

पिताजी का मन खट्टा हो गया,फिर खीज कर वे घर के अन्दर दौड़ते गए और रमजू का झूला उठाया। काँपते हाथों और लड़खड़ाते पाँवों से उन्होंने झूला बाहर निकाला और मोहल्ले के बीच में ले जा कर रख दिया : "अब देख ले, धूप कैसे लगती है, यह मालूम हो जाएगा। अब तो नीचे आता है न?"

पीरू कूद कर नीचे आ गया : "ओय बापू जी! बापू जी! आपने यह क्या किया? यह मर जाएगा! इस मासूम बच्चे को आग में रखते हुए आपको कोई विचार नहीं आया?"

पीरू ने एक हाथ से पालना उठा कर बरामदे के एक कोने में रख दिया।

पिताजी ने कहा : "बेटा! तुझे रमजू जैसे प्रिय है, ऐसे ही तु मुझे प्रिय है। जैसे तू इसका बाप है, वैसे ही मैं तेरा बाप हूँ। जैसे रमजू पीरू के मन बच्चा है, वैसे ही पीरू मेरे मन बच्चा है! जैसे रमजू तेरा है, वैसे ही तू मेरा है। समझा बेटा?"

बूढ़े की आँखों में आँसू आ गए। पीरू लज्जित हुआ। उसने

आँखें नीची कर लीं। उसकी आँखों से भी आँसू बह रहे थे।

पीरू जवान था, बहादुर था, हाथों में लाठी रखता था, किसी को कुछ नहीं समझता था। बस, एक पिताजी का लिहाज रखता था।

•••••

पिताजी-कौवा!

एक था बनिया। उसके एक छह-सात साल का लड़का था। लड़का बड़ा बातूनी था। वह हर रोज पिता के साथ दुकान पर जाता और पिता से कुछ-न-कुछ पूछता रहता। बनिया बहुत ही शान्त मिजाज का था। बेटे को खुश करने के लिए वह उसके हर प्रश्न का उत्तर देता था। कभी भी घेलिया को नाखुश नहीं करता था। कभी चिढ़ता भी नहीं था। जैसा घेलिया भाई कहता, वैसा करता।

एक दिन घेलिया पिता के साथ दुकान पर आया हुआ था। पिता की गोद में खेल रहा था और कुछ-न-कुछ पूछता जा रहा था। दुकान के सामने एक पेड़ था, उसके ऊपर एक कौआ आ कर बैठ गया और काँव...काँव...करने लगा। घेलिया ने कौवे को देखा, इसलिए उसकी तरफ इशारा करके उसने पिता से कहा : "पिताजी—कौवा!"

पिता ने कहा : "हाँ भाई, कौवा।"

फिर लड़के ने पिता का हाथ पकड़ कर कहा : "पिताजी—कौवा"

पिता ने फिर से उत्तर दिया : "हाँ भाई, कौवा!"

लड़के ने तीसरी बार कहा : "पिताजी—कौवा"

पिता ने पूर्ववत धैर्य से कहा : "हाँ भाई, कौवा!"

जवाब देने के बाद पिता दुकान के काम में थोड़ा व्यस्त हुआ, तब लड़के ने पिता का घुटना हिला कर कहा : "देखिये न, पिताजी—कौवा"

पिता ने धन्धे से फारिग हो कर शान्ति से कहा : "हाँ, बेटा, कौवा!"

लड़का नटखट था, अतः इतने जवाब से उसे सन्तोष न हुआ। पिता फिर अपने काम में डूब गया, तब उसकी पगड़ी खींच कर बोला : "पिताजी—कौवा!"

पिता ने बिना चिढ़े कहा : "हाँ भाई! कौवा।"

कुछ देर तक लड़का कौवे को देखता रहा, फिर अचानक धुन लगी और पिता का कन्धा जोर से हिला कर बोला : "पिताजी—कौवा!"

पिता ने जरा भी गुस्सा किये बिना कहा : "हाँ भाई, कौवा!"

इस तरह लड़का बारम्बार पिता से—"पिताजी—कौवा! पिता जी—कौवा" पूछता गया, और पिता—"हाँ भाई, कौवा!" जवाब देता गया। आखिर लड़का थक गया और उसका 'पिताजी—कौवा!' बोलना बन्द हो गया।

बाप बनिया था और सयाना भी था। लड़का जैसे-जैसे 'पिताजी—कौवा! पिताजी—कौवा!' बोलता गया, वैसे वह अपनी बही में—'पिताजी—कौवा!' 'हाँ भाई, कौवा!' लिखता गया। लड़का थक गया तो पिता ने गिनती की तो बराबर एक सौ बार 'पिताजी—कौवा!' 'हाँ भाई, कौवा!' लिखा हुआ था। भविष्य में कभी यह बही उपयोगी होगी, ऐसा मान कर समझदार बनिए ने उसे सँभाल कर पुरानी बहियों के साथ रखवा दिया।

इस घटना के बाद वर्षों गुजर गए। बनिया वृद्ध हो गया और घेलिया तीस साल का ज़वान हो गया। अब वह बड़ा-सा सेठ बन गया चुका था, व्यापार भी धड़ाके से चला था। घेलिया अब सबके लिए 'घेला सेठ' 'घेला सेठ' हो गया था। हर जगह उसका सम्मान होता।

परन्तु बूढ़ा बनिया दुखी था। घेला सेठ उसे बहुत दुख दे रहा था। वह तंग आ गया। तब उसने घेलिया को यह याद दिलाने का विचार किया कि उसने कैसे प्यार से उसे पाला था। एक दिन बूढ़ा बनिया छड़ी ले कर दुकान पर गया, और घेला सेठ की गद्दी पर

बैठ गया। बाप को देख कर बेटा चिढ़ गया। मन-ही-मन बोला : —"यह बूढ़ा यहाँ कैसे आ गया? अब व्यर्थ का क्लेश करेगा।"

कुछ देर बाद बूढ़े ने एक कौवा देख कर ठण्डे कलेजे से कहा : "भाई, कौवा!"

घेलशा' तो बूढ़े के प्रश्न से ही विचार में पड़ गए और चिढ़ कर बोले : "हाँ, पिताजी—कौवा!"

बूढ़े ने कहा : "भाई—कौवा!"

घेलशा' ने चिढ़ कर और कुछ तिरस्कार से जवाब दिया : "हाँ पिताजी! कौवा!"

बूढ़ा ताड़ गया कि बेटा चिढ़ रहा है। परन्तु वह तो बेटे की आँख खोलने के लिए ही आया था। उसने अत्यन्त शान्ति से फिर कहा : "भाई—कौवा!"

भाई तो अब आग-बबूले हो गए : —"हाँ, पिताजी! कौवा! हाँ, वह कौवा है, इसमें बार-बार 'भाई—कौवा!' क्यों बोल रहे हो! मुझे अपना काम करने दो।" कह कर घेलाशा' मुँह मोड़ कर अपने काम में लग गया।

बूढ़ा बनिया भी कच्ची गोलियाँ नहीं खेला था। घेलाशा' का हाथ पकड़ कर उसने कौवे की तरफ उँगली का इशारा करके शान्ति से कहा : "भाई—कौवा!"

अब घेलाशा' का पारा आसमान पर चढ़ गया। उसने सोचा : यह बूढ़ा व्यर्थ में 'भाई—कौवा! भाई—कौवा!' बड़बड़ा रहा है। और कोई काम-धन्धा नहीं है। बेकार और व्यर्थ की बकवास!

उसने बूढ़े की तरफ देख कर कहा : —"पिताजी! घर पर जाइए। इधर आपका क्या काम है? दुकान के काम में क्यों व्यर्थ बाधा डाल रहे हो?"

शान्ति से थोड़ा हँस कर, कौवे की ओर उँगली का इशारा करके बूढ़े ने कहा : "पर, भाई—कौवा!"

"हाँ, पिताजी—कौवा! कौवा! कौवा! अब कितनी बार कौवा? कौवे में ऐसा क्या है कि आप कौवा-कौवा कर रहे हैं?"

बूढ़े ने फिर से इशारा किया : "भाई—कौवा!" ऐसा बोलने से पहले ही घेला सेठ ने गुमाश्ते से कहा कि कौवे को उड़ा दो। कौवे को उड़ा दिया गया। फिर लिखते-लिखते अपने मन में जल कर ऊँची आवाज में बड़बड़ाने लगा : "सच कहा है कि साठी में बुद्धि का नाश होता है। इस बूढ़े की बुद्धि अब एकदम नष्ट हो गई है। अब तो बूढ़ा मर जाए तो अच्छा है!"

बूढ़े की आँखों में आँसू आ गए। उसने अपने पुराने गुमाश्ते को बुला कर पुरानी बही निकलवाई और 'पिताजी—कौवा!' 'हाँ, भाई—कौवा!' लिखा हुआ पृष्ठ खोल कर घेलाशा' के सामने रखा। गुमाश्ते ने घेलशा' को उसके बचपन की सारी कहानी सुनाई। घेलाशा' तुरन्त ही सब कुछ समझ गया। वह पिता से माफी माँगने लगा और तब से सच्चे दिल से माँ-बाप की सेवा करने लगा।

•••••